।। वेदान्त पीयूष ।।

मुख्य पृष्ठ | उपदेश सार | उपासना | सामान्य | मिशन समाचार

Postal Regd No : IDC/MP/966/2006-08 Indore   मूल्य - रु १०/-, वर्ष -६ अंक-७४

आर.एन.आई. पंजीकरण संख्या - एम.पी/हिन्दी/२०००/१०६०६   मार्च -२००८

ॐ नमः प्रणवार्थाय शुद्धज्ञानैकमूर्तये। निर्मलाय प्रशान्ताय दक्षिणामूर्तये नमः।।

जो प्रणव का अर्थ हैं, शुद्ध ज्ञानस्वरूप हैं, निर्मल हैं, प्रशान्त हैं - ऐसे श्रीदक्षिणामूर्तिजी को हमारा नमस्कार।

अद्वयावस्था

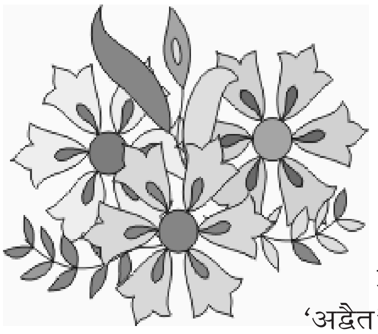

द्वैत संसार है तो अद्वैत मुक्ति का सूचक है। वस्तुतः अद्वैत एक अवस्था का सूचक है। यह ज्ञान से प्राप्त प्रबुद्धता है। अद्वैत की सिद्धि का आशय ऐसे गंतव्य की प्राप्ति है, जहां न कोई भेद, खंड या सीमा है। ऐसी असीम अवस्था में स्वयं ही जग गए। जहां अपनी परिच्छिन्नता का अभाव और अपनी ब्रह्मस्वरूपता को देख लिया। ऐसी अद्वैत की अवस्था की कोई भी व्यक्ति सीमाओं और विकारों से युक्त बने रहकर कल्पना नहीं कर सकता। अद्वैत की अवस्था किसी कालविशेष में प्राप्त करने योग्य या लोकविशेष को प्राप्त करने योग्य नहीं है। किन्तु यह तो हमारी परिपूर्णता की अवस्था का सूचक है। ‘अद्वैत’ शब्द पूर्णता की अवस्था के सूचक के साथ साथ एक प्रक्रिया का भी सूचक है। इस पूर्णता की अवस्था की प्राप्ति के लिए द्वैत का निषेध करना आपेक्षित है। वास्तविक ‘द्वैत’ दृष्टा के द्वारा देखा हुआ प्रतीति रूपा भेद नहीं है, किन्तु जीव का होना ही द्वैत है। यदि जीव चारो ओर एकता देखने लगे तो वह भी द्वैत के अन्तर्गत ही है। क्योंकि जीव का रहना ही अज्ञान, खंड है, वह ही द्वैत है। इन खंड की वजह से जीव परिच्छिन्नता का अनुभव करता है, तत्पश्चात् उससे मुक्त होने के प्रयास होते है। इस प्रकार पूर्णता की खोज रूप एक संसार का दुष्चक्र आरंभ हो जाता है। इससे मुक्ति के लिए जीवभाव बाधित करके अद्वैत में जग जाना ही एक मात्र उपाय है।

अद्वैत में जगने के लिए विवेक, वैराग्य, संन्यास, योग आदि साधन बताए जाते हैं। इन साधनों को भी इसी परिपेक्ष में देखना चाहिए। वास्तविक द्वैत जीव की स्वतंत्र सत्ता होना है। अतः यह विवेक की प्राप्ति हो कि जीव अनित्य और साक्षी नित्य है। यह ही नित्यानित्य वस्तु विवेक है। इस व्यक्ति रूप जीवभाव पर पुनरालोकन करें। इनकी प्रत्येक चेष्टाओं का न विरोध करते हैं, न ही पुष्टि। क्योंकि इसके माध्यम से ही इनको आशीर्वाद प्राप्त होता है। बाकी समस्त अनुभूतियों की उपेक्षा करके, बगैर किसी प्रतिक्रिया के जीव का अवलोकन कर पाना ही वैराग्य है। उसका परीक्षण करके अंतर्विवेक प्राप्त किया जाता है साथ ही तत्पद का शोधन करते हैं। मूलरूप से जीव स्वप्रकाश सच्चिदानंद सत्ता है। यह तथ्य अपने और अन्य के बारे में बहुत निश्चित दिखे। इसके अलावा जो भी दिखे वह अध्यारोप मात्र है।

संन्यास का स्वरूप भी यह है कि जहां जीवभाव से तादात्म्य नहीं किया जा रहा। अतः जीव की प्रत्येक चेष्टाओं को बगैर किसी प्रतिक्रिया के अवलोकन करके उसकी गहराई में विचार कर पाते हैं, तथा योग वह है कि ‘साक्षी’ जो जीव का प्रकाशक है, उसकी जागृति बनाए रखना। इस योग के द्वारा अपने बारे में पूर्णता की श्रद्धा बनाए रखते हैं। संन्यास जीव से तादात्म्य नहीं करते हुए कुछ करना नहीं है, बल्कि कुछ न करते हुए इसी जीव को समझने का प्रयास है। जहां इन गुणों से संपन्न तो अद्वैत शब्द के द्वारा प्रक्रिया सूचित है। जहां जीव को देखते जाते है, उसके प्रत्येक विचार - अज्ञान जनित प्रतिक्रिया है।

ऐसी विचार की प्रक्रिया आरंभ करें कि जीव के रहस्यों के बारे में अच्छी तरह विचार कर पाएं, जैसे-जैसे यह भान होता जाता है कि सब प्रतिक्रिया अज्ञान पर टीकी हुई है तथा जीव के अनेकों कार्य मोह पर टिके हुए हैं, जीव का व्यक्तित्व मोह के कारण है। जहां ऐसे विचार करते-करते विचारक भी खत्म हो जाता है, तब जो भी रहता है वह ही अपनी सच्चाई है, आत्मा है। जीव की समाप्ति से द्वैत का आघार ही समाप्त हो जाता है, जो अवशिष्ट है वह ही अद्वैत है। अतः अद्वैत शब्द एक अवस्था तथा एक प्रक्रिया का भी सूचक है। यह अद्वैत ही आनंद है।

पिछले श्लोक में महर्षिजी ने बताया कि मन के उपर विचार करने पर यह पता चलता है कि मन की अपनी कोई स्वतंत्र सत्ता ही नहीं है। इस मन पर किस प्रकार के विचार किया जाएं? इस विचार का स्वरूप महर्षिजी अगले श्लोक में दिखाते हैं।

वृत्तयस्त्वहं वृत्तिमाश्रिताः।
वृत्तयो मनो विद्धि अहं मनः।। 18

समस्त वृत्तियां 'अहं वृत्ति' पर आश्रित हैं। अतः 'अहं वृत्ति' भी मन है। क्योंकि वृत्ति ही मन है।

उपदेश सार

मन एक अद्भुत करण है। मन के जगते ही समस्त विचार प्रारम्भ हो जाते हैं, और उसके लय होते ही सब विचार एवं भावनाएं अनुपलब्ध हो जाती हैं। यदि मन को ठीक से समझा जाएं तो वह आशीर्वाद बन जाता है, और अगर उसे ठीक से नहीं समझा जाए तो वह इस दुनिया की सबसे बड़ी समस्या बन जाता है। वह ही हमारे बन्धन एवं मोक्ष का कारण है। यह अभिशाप एवं आशीर्वाद की सम्भावना केवल ठीक ज्ञान के रहने या न रहने पर निर्भर हुआ करती है। अतः शास्त्र भी कहते हैं कि मन के बारे में प्रमाणपूर्वक विचार करने पर अपनी समस्त समस्याओं का समाधान प्राप्त हो जाएगा।

मन कहते हैं वृत्तियों के प्रवाह को। वृत्ति उसे कहते हैं जिसके द्वारा हम किसी आन्तरिक या बाहरी वस्तु का 'भान' उत्पन्न करते हैं। हमारे मन में ही विविध वस्तुओं का सतत भान उत्पन्न होता रहता है। यह भान निकट अथवा दूर वस्तु का, स्थूल वा सूक्ष्म, वर्तमान वा भूत/भविष्य का, सुखद वा दुःखद आदि किसी भी वस्तु का हो सकता है। ये वृत्तियाँ संकल्प-विकल्पात्मक, भावनात्मक, अथवा ज्ञान-अज्ञान रूपी हो सकती हैं। वृत्तियाँ स्थायी नहीं होती हैं, ये तो मिथ्या की श्रेणी में ही आती है। अतः सत्य के बारे में जानना चाहिए। इसके लिए सर्व प्रथम मन को शांत करके देखें। जो भी अनुभूति हो रही है, उससे तादात्म्य छोड़कर देखें। जब बाकी समस्त वृत्तियां शांत होती है, तब उन समस्त वृत्तियों का उद्‌गम स्थान क्या है? उसकी तरफ ध्यान जाता है।

इन वृत्तियों का आधार क्या है? समस्त वृत्तियों के गर्भ में एक वृत्ति विद्यमान रहती है, जो कि विविध वृत्तियों के आवागमन से अप्रभावित रहते हुए उसे प्रकाशित करती हुई विद्यमान रहती है, तथा इस वृत्ति के अभाव में अन्य वृत्तियों एवं विचारों का अस्तित्व भी नहीं रहता है। वह है - 'मैं वृत्ति'। सुषुप्ति से जगने के उपरान्त सर्व प्रथम 'मैं हूं' यह वृत्ति आती है, तत्पश्चात् 'मैं क्या हूं' 'मैं देख रहा हूं,... इत्यादि वृत्तियां अस्तित्व में आती है। अर्थात् यह 'अहं वृत्ति' ही समस्त 'इदं वृत्तियों' की आधार है। जब तक मन रहता है, तब तक यह 'अहं वृत्ति' स्थायी रहती है।

मन के अभाव में यह 'अहं वृत्ति' का भी भान खत्म हो जाता है। एवं यह 'अहं वृत्ति' हमारे मन की ही उपज है। इस 'अहं वृत्ति' को ही आधार बनाकर ही समस्त व्यक्तित्व निर्मित होता है। अतः इस 'अहं वृत्ति' की गहराई में जाकर उस पर विचार करना चाहिए। यदि यह 'अहं वृत्ति' जिससे हम तादात्म्य को प्राप्त करके अपने आपको एक व्यक्ति मात्र समझ रहे हैं, जिसकी वजह से अपने सीमित होने का भान होता है। ऐसे कल्पित व्यक्तित्व को आधार बनाकर जीने के क्या दुष्परिणाम होते हैं, इसे बहुत अच्छी तरह देखना चाहिए। इसी स्तर पर खड़े रहने के उपरान्त खंड का अस्तित्व आता है, देशादि की सीमाओं के रेल्म में आ जाते हैं, अपूर्णता एवं दीनता होती है। अतः इसे अच्छी तरह से समझ कर उसके सत्य के बारे में विचार करके देखना चाहिए। तब यह सीमित व्यक्तित्व बाधित कर अपनी सत्य स्वरूपता का ज्ञान होता है, जिसमें किसी प्रकार की देश, काल या वस्तु की परिच्छिन्नता नहीं है। समस्त संसार का आधार इस 'अहं वृत्ति' पर विचार ही एक मात्र मुक्ति का तरीका है।

किसी कर्म की सम्पन्नता में जो निमित्त होता है, उसे न हर्ष होता है और न ही शोक। जैसे कोई व्यक्ति निशाना साधकर बन्दूक से गोली चलाये और गोली निशाने पर लगे तो बन्दूक न हर्षित होती है न शोकान्वित। किन्तु गोली चलाने वाले में हर्ष और शोक होता है। हर्ष और शोक से मुक्ति पाने के लिए अपने आपको ईश्वर के हाथों में निमित्त मात्र जाने। अपने कर्तापन के अभिमान को गुरु व ईश्वर के चरणों में समर्पित कर स्वयं को निमित्त बना लेना ही अहंकार का खण्डन है। अहंकार के खण्डित हो जाने पर अन्त में चित्त ईश्वर की और खिंच जाये तभी जीवन में कृतकृत्यता आती है।

जै जै जै हनुमान गोसांईं। कृपा करहु गुरुदेव की नाईं।।

__हे__ हनुमानजी! आप की जय हो, आप हम पर गुरुदेव की भांति कृपा कीजिए। हम बारबार आप की जयकार करते हैं।

हनुमान चालीसा

गोस्वामीजी इस ग्रंथ में हनुमानजी के व्यक्तित्व को समग्रता से स्मरण करते हुए उनकी स्तुति कर रहे हैं। जब किसी के व्यक्तित्व में इतनी ओजस्विता, महानता, समग्रता को देखकर निःशब्द हो जाते हैं, तब हृदय से जयकार निकलती है। तीन बार जयकार मन, वाणी और कर्म के स्तर से होने का सूचक है। 'हे हनुमानजी! आप इतने महान हैं, कि आपकी महानता किसी शब्दों के द्वारा बखान नहीं हो सकती है। हम मात्र इतना ही कह सकते हैं कि आपकी जय हो! मन के द्वारा हम आपकी महानता को अनुभव कर सकें, वाणी भी आपकी महानता को देखने की वजह से धन्यता से युक्त होकर गुणगान करे, और हमारे प्रत्येक कर्म के समय आपकी महानता का भान बना रहे। हम आप ही को आदर्श जानते हुए अपने कर्म को मन, वचन से सम्पन्न कर सकें। हे हनुमानजी! हमारे लिए आप आदर्श हैं। आप हम पर अपने गुरुदेव की तरह ही कृपा कीजिए। आप की कृपा को ग्रहण करने की हममें पात्रता जगें। हम आप ही की तरह ज्ञान को जी सकें, भक्ति से युक्त होकर निष्कामतापूर्वक सेवा कर सकें। हमारी वाणी भी आपके जैसी सुंदर हो।' तुलीदासजी हनुमानजी को गोस्वामी अर्थात् जगत के स्वामी रूप ही देख रहे हैं। वे प्रभु श्रीराम से अनन्य हैं - इस तथ्य को देख रहे हैं।

यज्ञभाव

यज्ञ का अभिप्राय होता है ईश्वरार्पण बुद्धि से युक्त होकर समष्टि के प्रति संवेदनशील होकर कार्य करना। वैदिक काल में द्रव्ययज्ञ का विशेष रूप से प्रचलन हुआ करता था। इस यज्ञ में एक विधि विधान से इंटों की बनी हुई यज्ञवेदी होती है। उस यज्ञकुण्ड में परमात्मा का अग्नि रूप से आवाहन किया जाता है और उनके प्रति द्रव्य पदार्थों की आहूतियां दी जाती है। गीता में भगवान ने अनेकों प्रकार के यज्ञ बताते हुए उसे व्यावहारिक स्तर पर भी ओतप्रोत कर दिया। भगवान कहते है कि तुम अपने प्रत्येक कार्य में यज्ञ की भावना को जोड़ सकते हो। इससे तुम्हारे जीवन में व्यवहार और अध्यात्म अथवा धर्म का भेद नहीं रह जाएगा। इसके लिए कर्म को किसी प्रकार से बदलने की आवश्यकता नहीं है, किन्तु कर्म के पीछे के भाव को व दृष्टि को ही परिवर्तित किया जाना चाहिए।

जब तुम भोजन करते हो, उस समय भोजन के प्रति भोगदृष्टि की सम्भावना हो सकती है। किन्तु यदि भाव की शुद्धि हो तो यह भी एक यज्ञ कर्म हो जाता हैं। जिस समय भुख लगती है तब पेट में जठराग्नि प्रज्ज्वलित होती है। इस जठराग्नि को वैश्वानर अर्थात् साक्षात् परमात्मा ही उद्भूत हुए है। उनमें एक एक कौर भोजन आहूतियों की तरह समर्पित किया जाता है। जिस समय कोई विषय को ग्रहण करते हैं, तब इन्द्रियों को अग्निरूप जानें और विषय रूपी आहूति समर्पत करें। यदि इन्द्रियों का संयम हो रहा हैं, तो इन्द्रियां रूपी आहूति को संयम रूपी अग्नि में समर्पित कर रहे हैं, यह भावना रखें। इस प्रकार करने से न तो कर्मविशेष के कर्तृत्व का अभिमान होता हैं, और नहीं भोगदृष्टि उत्पन्न होती है। किन्तु यज्ञ के प्रसादरूप में स्वास्थ्यलाभ और मन की प्रसन्नता का प्रसाद प्राप्त होता है।

__हे__ अन्तर्यामी ! नजरें झुकाकर उठाई हमने, तो आप ही आप नजर आए।
कहीं दरिये की नाजुक लहरों में, तो कभी आंधी व तुफाँ में सवार दिखे।
कभी आफताब की रोशनी में, तो कभी मेहताब की सवारी में।
कभी परिन्दों की उंची उड़ानों में, तो कहीं फूलों की महक में।
कहीं बच्चे की मुस्कान में, तो कहीं दर्दी की दर्दभरी आह में।
कभी दिल के झरोंखों में खुशियों के उजाले में, तो कभी गम के साये में।
जीवन की धूपछांव की कश्मकश में, एक अजीब सी कशीश पाई हमनें।
हरदम मेरा आपा बने, इस दिल की धड़कनों में धड़के।
सांसों की सितार बजाते रहें, ओर हम तेरे इश्क में खुशी के नग्में गुनगुनाते रहें।।

शुद्ध-शांत मन में 'मैं हूं' वृत्ति की अनुभूति बहुत स्पष्ट होती है।

मिशन समाचार

वेदान्त आश्रम, इन्दौर :- वेदान्त आश्रम, इन्दौर में प्रतिदिन पूज्य गुरुजी के द्वारा प्रातः ७.०० बजे से लक्ष्मीधर कवि कृत 'अद्वैत मकरंद' ग्रंथ पर प्रवचन चल रहे हैं। प्रातः ६.०० और सायं ७.०० बजे भगवान श्री गंगेश्वर महादेवजी की आरती होती है। सायं आरती के बाद भजन का कार्यक्रम होता है। प्रति सोमवार को गंगेश्वर महादेव का रुद्रभिषेक किया जाता हैं। इसके अलावा वेदान्त आश्रम गुरुकुल में अंग्रेजी भाषा में वेदान्त का संक्षिप्त कार्स आरम्भ हुआ है। जिसमें पूज्य गुरुजी द्वारा 'वेदान्त सार' ग्रंथ का अध्ययन कराया जाता है, उसके अलावा गीता, संस्कृत तथा स्तोत्र-पाठ भी सिखाया जा रहा है।

जनवरी २१ से २६ तक पूना में स्थित पुण्यधाम आश्रम में साधना शिविर सम्पन्न हुआ। जिसमें ध्यान, प्रवचन, परिचर्चाएं, भजन आदि हुए। इसके अलावा २६ जनवरी को ध्वजवन्दन करते हुए देश के प्रति श्रद्धांजलि समर्पित की गई।

शिव उपासना शिविर

दिनांक – १ से ५ मार्च २००८
स्थान– वेदान्त आश्रम, सुदामा नगर, इन्दौर

विषय –शिव अपराध क्षमापन स्तोत्र एवं शिव महिम्नः स्तोत्र, ध्यान एवं परिचर्चाएं

शिवरात्री कार्यक्रम

वेदान्त आश्रम, इन्दौर में महा शिवरात्रि पर्व निमित्त ६ मार्च ' ०८ को प्रातः गंगेश्वर महादेवजी का रूद्राभिषेक होगा सायं ६.०० बजे से आश्रम शिरस्थ विशालकाय शिवलिंग का १०८ कलशों से अभिषेक होगा। इसके अलावा विशेष झांकी, संकीर्तन आदि कार्यक्रम पूरे दिन पर्यन्त चलते रहेगे।

गीता ज्ञान यज्ञ

(पूज्य गुरुजी द्वारा)

दिनांक– १४ से २० मार्च
विषय– दृग्दृश्य विवेक
गीता अ–१४
स्थान – हरिः ओम् मंदिर, लखनउ

स्वामिनि समतानंदजी द्वारा

दिनांक– १६ से २० मार्च
स्थान – नेशनल कालेज हाल बान्द्रा, मुम्बई

: प्रकाशन घोषणा :

'वेदान्त पीयूष' मासिक पत्रिका के स्वामित्व एवं अन्य सम्बंधित विवरणः–

१. प्रकाशन का स्थान :	ई–२६४८.५०, सुदामा नगर, इन्दौर
२. प्रकाशन –	मासिक पत्रिका
३. मुद्रक एवं प्रकाशक का नाम –	स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती द्वारा वेदान्त पारमार्थिक सेवा ट्रस्ट के लिए
४. सम्पादक का नाम –	स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती
५. मुद्रक का नाम एवं पता –	स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती के लिए तुलिका प्रिन्टिंग मन्दिर, ३४ ए, ग्रीनलेण्ड कॉलोनी, स्नेह नगर, इन्दौर
क्या भारत की नागरिक हैं? –	हां
पता –	वेदान्त आश्रम, ई–२६४८–५०, सुदामा नगर, इन्दौर
समाचार पत्र के स्वामी हैं –	हां

मैं स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती एतद् द्वारा घोषित करती हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपर दिए गए विवरण सत्य है।

दि. २८.२.२००८ **स्वामिनि अमितानन्द**

—: शुभ कामनाओं सहित :—

1. Sh. P.H. Shah, Ahmedabad
2. M/S Punit Apparels Pvt. Ltd., Indore
3. M/S Samarpan Engg. & Mkt. Pvt. Ltd., Indore
4. Sh. Chandru Kukreja, Mumbai
5. M/S Pharmalab Filtration India. Ltd., Mumbai
6. M/S Elite Housing Developement Pvt. Ltd., Mumbai

-: वेदान्त पीयूष :-
स्वामी/मुद्रक/प्रकाशक/सम्पादक :- स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती के लिये, तुलिका प्रिन्टिंग मन्दिर, ३४ ए ग्रीनलेण्ड कॉलोनी, स्नेहनगर, इन्दौर से मुद्रित एवं 'वेदान्त आश्रम', ई–२६४८.५० सुदामा नगर, इन्दौर से प्रकाशित।
सम्पादक :- स्वामिनि अमितानन्द सरस्वती Tel : 0731-2486055, 9302107229 ; E mail- info@vmission.org
आर.एन.आई. पंजीकरण संख्या – एम.पी/हिन्दी/२०००/१०६०६